आतंकवाद के स्रोत को रोकने की जरूरत है

इस्लामी आतंकवाद की तुलना उस राक्षस से की जा सकती है जिसके प्राण उसके शरीर में न होकर एक तोते में बसते थे। आतंकवाद के प्राण इसकी विचारधारा में बसते है, उन सरदारों और संगठनों में नहीं जिन पर प्रहार कर इसे खत्म करने की कोशिशें हो रही है। यदि ओसामा बिन लादेन या मोहम्मद अफजल को काबू भी कर लिया जाए तो भी आतंक का सिलसिला खत्म होने वाला नहीं है। पाकिस्तान, अफगानिस्तान, अरब, यूरोप और भारत में अनेकानेक आतंकवादी मारे गए है। सैकड़ों जेलों में बंद है। तब यह आतंकवाद खत्म क्यों नहीं हो रहा है? इसलिए कि उसकी प्रेरणा, एक विशिष्ट विचारधारा से लड़ने में संकोच किया जा रहा है। बल्कि उलटे उस विचारधारा को बचाया जाता है। जब भी कोई बड़ा आतंकवादी हमला होता है तब जरूर कहा जाता है कि आतंकवादियों का कोई मजहब नहीं होता। अजीब है कि अन्य अपराधियों के संबंध में बयान नहीं आता कि उनका कोई मजहब नहीं होता। इसलिए यह बयान स्वयं सच्चाई की चुगली करता है। अभी मुंबई हमले के बाद भी मौलाना मदनी, अभिनेता आमिर खान और कुछेक मुस्लिम हस्तियों ने वही बयान दोहराया। राजनीतिक दल भी ऐसी ही रट लगा रहे हैं।

यदि सच है कि आतंकवादियों का कोई मजहब नहीं होता तो पिछले आठ वर्ष में दुनिया में हुए लगभग सभी आतंकवादी कारनामों के तार केवल एक देश पाकिस्तान से ही जुड़े क्यों पाए गए? दुनिया भर के आतंकवादी प्रशिक्षण या तैयारी करने वहीं क्यों जाते है, जापान या श्रीलंका क्यों नहीं जाते? यदि आतंकवादियों का कोई मजहब नहीं होता तो उनमें तरह-तरह के मजहबी विश्वासों को मानने वाले रंगरूट तैयार हो रहे होते। अफगानिस्तान में तालिबान फिर सत्ता पर काबिज होने की तैयारी कर रहे हैं। तालिबान ने ही बिन लादेन को अपना अंतरराष्ट्रीय हेडक्वार्टर बनाने के लिए जमीन दी, जहां से अलकायदा ने दुनिया भर में अनेक आतंकी हमले किए। क्या आमिर खान बताएंगे कि क्यों दुनिया की किसी ईसाई मिशनरी या बौद्ध विद्यालय से एक भी आतंकवादी क्यों नहीं निकला?

पाकिस्तान में छह वर्ष पहले मजहबी मामलों के मंत्री महमूद अहमद गाजी ने कहा था कि वहां दस हजार ऐसे मदरसों की पहचान की जा रही है जहां से आतंकवाद के प्रसार का संदेह है। इस एकमात्र तथ्य से स्पष्ट है कि इस्लामी इल्म से आतंकवाद का कितना सीधा संबंध है। तब बार-बार दोहराना कि आतंकवाद को किसी मजहब से नहीं जोड़ना चाहिए, एक आत्मघाती प्रवंचना है। इस्लामी आतंकवादी संगठन, उनके ट्रेनिंग केंद्र और विचारों को उन्हे पनपाने वाली जमीन से काट कर नहीं समझा जा सकता। आज सबसे बड़ी बाधा यह है कि आतंकवाद को वैचारिक, नैतिक, भौतिक समर्थन देने वाले सभी तत्वों से आंख चुराकर लड़ने की बात की जाती है। यह छिपाने के उलटे परिणाम निकले हैं कि इस्लामी आतंकवादी अपने

मजहबी विश्वासों के तहत ही सब कुछ कर रहे है। चाहे आतंकवादी कैंपों की पाठ्य-सामग्री हो या आतंकी संगठनों के दस्तावेज या ओसामा जैसे सरदारों के उकसावे, सब में समान सूत्र जिहादी विश्वास ही है। नहीं तो तालिबान या अलकायदा के वीभत्स से वीभत्स कारनामों पर मुस्लिम देशों में मौन समर्थन क्यों छाया रहता है? यदि आतंकवादी इस्लाम का दुरुपयोग कर रहे है तो बात-बात में फतवे जारी करने वाले उलेमा ने किसी आतंकी संगठन या सरदार के खिलाफ कभी कोई फतवा क्यों जारी नहीं किया? सजा क्यों नहीं सुनाई?

आतंकियों की असली ताकत मजहबी विचारधारा पर उनका आंख मूंदकर विश्वास करना है। वे जैसा सोचते है वैसा कहते भी है। सेकुलरवादियों की तरह सोचने और कहने में दोहरापन नहीं दिखाते। दोहरापन तो उनमें है जो आतंकी घोषणाओं की अनदेखी करते है। जिहादी मानसिकता तब तक समाप्त नहीं होगी जब तक अपने विचारों पर उसका भरोसा अडिग रहेगा। यह विश्वास तभी हिलेगा जब उसके बुनियादी मजहबी अंधविश्वासों को खुलकर चुनौती दी जाएगी। भावनाओं के नाम पर सकुचाने से उलटे विध्वंस का पैमाना बढ़ता जाएगा। मुंबई का हमला इसका उदाहरण है। इस असुविधाजनक सच्चाई का सामना करने से बचकर हम अगले और बड़े हमलों को निमंत्रण दे रहे है। अत :जरूरी है कि आतंकवादियों के वैचारिक सूत्रधारों के बयानों को गंभीरता से लिया जाए। यदि कोई उन्मादी कहता है कि कश्मीर तो जिहाद का दरवाजा भर है, हमारे निशाने पर तो पूरा हिंदुस्तान है, अथवा हम एक और महमूद गजनवी का इंतजार कर रहे है तो ऐसी स्पष्ट घोषणाओं की उपेक्षा कर, इसके प्रेरक विचारों पर चुप्पी रखना आत्मप्रवंचना है। बार-बार एक नकली बात कहकर असली लड़ाई से बचने की कोशिश बुद्धिमानी नहीं है।

बी एन शर्मा